अनन्तर/जनसत्ता/२५ फरवरी, २००७

कालीबंगा का अन्वेषी

ओम थानवी

पिछली दफा स्तंभ में भाषाविज्ञानी, इतिहासज्ञ और पुरातत्त्ववेत्ता लुइजी पिओ तैस्सितोरी का जिक्र चला था। वे इटली के रहने वाले थे और बीकानेर में उनका निधन हुआ। मुअनजो-दड़ो से पहले उन्होंने बीकानेर रियासत में पड़ने वाले सिंधु घाटी (हड़प्पा सभ्यता) के नगर कालीबंगा की खोज की थी। कालीबंगा में आगे हुए उत्खनन से ही पता चला कि सिंधु घाटी में उन्नत खेती होती थी।

राखालदास बनर्जी को मुअनजो-दड़ो में एक सींग वाले बैल की जो मुहरें और पाषाण उपकरण मिले, तैस्सितोरी को बीकानेर क्षेत्र में वे कई साल पहले मिल गए थे। सबसे पहले उन्होंने ही मुहरों और पत्थरों के औजारों को 'प्रागैतिहासिक' लक्ष्य किया, जबकि हड़प्पा में मुहरें खोज कर भी अलेग्जेंडर कनिंगम जैसे पुरातत्त्वी अपनी काल-गणना में लिखित इतिहास से पीछे नहीं जा सके थे। मुअनजो-दड़ो में मिली मुहरों ने भारत के इतिहास को पांच हजार साल का वक्फा अता किया; उसे दुनिया की दो सबसे पुरानी सभ्यताओं- मिस्र और मेसोपोटामिया - के समकक्ष ला खड़ा किया। मेरा खयाल है तैस्सितोरी की अकाल मृत्यु न हुई होती तो जॉन मार्शल की शागिर्दी में वे उन मुहरों का भेद भी देर-सवेर पा लेते। राखालदास बनर्जी से शायद पहले। और तब दुनिया के नक्शे पर सिंधु घाटी सभ्यता के उद्घाटन के हवाले के साथ उस जगह कालीबंगा का नाम होता, जहां किंचित कालांतर में, मुअनजो-दड़ो का हुआ। आखिर बनर्जी ने भी मुहरें अधूरे निष्कर्षों के साथ जॉन मार्शल के सुपुर्द की थीं, उन पर मार्शल के एक लेख पर विशेषज्ञों की प्रतिक्रियाओं की बदौलत सिंधु घाटी सभ्यता अनावृत हुई।

तैस्सितोरी की कब्र पर मन ही मन नमन भाव में यह उधेड़बुन मेरे भीतर रही। मैंने कविवर केदारनाथ सिंह के सामने अपना दिल खोला। वे बोले, जाहिर है! लेकिन उन्हें इस बात पर बहुत अचरज था कि सौ वर्ष पहले किए गए तैस्सितोरी के रामकथा शोध, राजस्थानी के व्याकरण लेखन और ग्रंथ-सर्वेक्षण के साथ उनके अहम पुरातत्त्व-अन्वेषण की चर्चा क्यों नहीं होती?

बीकानेर के सर्किट हाउस के पास गंदे नाले के मुहाने पर जो छोटा-सा कब्रिस्तान है, उस पर एक ताला जड़ा है। लगा कोई ताला तैस्सितोरी की लाल पत्थर जड़ी उस खुली कब्र पर भी टंगा है जो उस ज्ञान को एक घेरे से बाहर नहीं निकलने देता, जो कब्र में सोए युवक ने रेगिस्तान में अथक श्रम से संचित किया था। ज्ञान दफ्न नहीं है, फिर भी बहुत-कुछ लुप्त है। भला हो अमलानंद घोष, बृजवासी लाल और नयनजोत लाहिड़ी जैसे विद्वानों का, जिन्होंने कालीबंगा पर रोशनी डाली। तब लोगों ने जाना कि हड़प्पा से मुअनजो-दड़ो के बीच कोई और जगह भी थी जिसने सिंधु घाटी की खोज में मुअनजो-दड़ो से पहले दस्तक दी, कोई शख्स था जिसकी मुट्ठी में सिंधु सभ्यता की एकशृंगी वृषभ वाली मुहरें मौजूद थीं।

मुझे लगा कि धूप में तपती कब्र में कुछ हलचल हुई। मानो सोए युवक ने कोई करवट ली। पलकें झपकीं और मुट्ठियां खोलीं। दोनों हथेलियां खाली थीं। ज्ञान क्या कोई साथ ले जाता है? हमीं हैं जो कुछ दाय ऐसे भुला देते हैं, मानो उनका कभी कोई अस्तित्व ही न था। न उनका, न उनके दाता का। तैस्सितोरी की कब्र पर महसूस हुआ, वे वहां हर मुरीद की आमद पर शायद ऐसे ही करवट बदलते होंगे।

पुरातत्त्व के क्षेत्र में तैस्सितोरी के योगदान को भले समुचित महत्त्व न मिला हो, भाषा और साहित्य-समाज ने एक वक्त उनके काम की काफी खोज की। लेकिन लगता है वह सिलसिला अब थम गया है। लोग याद जगाने में बहुत वक्त लेते हैं, भुलाने में कम। पचास साल पहले बीकानेर में तैस्सितोरी के कुछ पत्रों के प्रकाश में आने पर उनके काम के सूत्र पकड़ में आए थे। उसी दौरान बनारस में नामवर सिंह ने अपभ्रंश तथा गुजराती और मारवाड़ी के संदर्भ में तैस्सितोरी के ''पुरानी राजस्थानी'' शोध पर काम किया। जोधपुर में नारायणसिंह

भाटी ने तैस्सितोरी के समूचे ग्रंथ-सर्वेक्षण का हिंदी अनुवाद प्रकाशित करवाया। लेकिन देश में बड़े पैमाने पर तैस्सितोरी के योगदान पर हिंदी, गुजराती या राजस्थानी में कोई बड़ा आयोजन आज तक नहीं हुआ।

बीकानेर में इस मामले में लोगों का उत्साह अब भी जब-तब जाग उठता है। कभी गंभीरता से, कभी महज प्रचार पाने या पत्थरों पर इबारतें गुदवाने के लिए। डॉ. सुनीति कुमार चटर्जी की अध्यक्षता में १९५६ में हुआ समारोह जरूर अनूठा आयोजन था। 'संयुक्त राजस्थान' और 'राजस्थान भारती' जैसी पत्रिकाओं ने तैस्सितोरी पर विशेषांक प्रकाशित किए। राजस्थानी भाषा को नाम तैस्सितोरी ने दिया था। राजस्थानी कथाकार श्रीलाल नथमल जोशी ने कृतज्ञ होकर तैस्सितोरी पर एक उपन्यास लिखा, 'धोरां रो धोरी' (टीबों का मसीहा)। लेकिन बाद में गतिविधियां शिथिल होती गईं। इस बीच शहर के कुछ नेता और कार्यकर्ता इटली में तैस्सितोरी के जन्मस्थान उदिने तक हो आए। 'बीकाणे-उदिने' जुड़वां शहर घोषित हो गए। कुछ कार्यक्रम चलाने का संकल्प हुआ। लेकिन जल्दी ही सब भुला दिया गया। संग्रहालय के सामने एक तैस्सितोरी बाग बना। वह अब उजड़ा दयार है। कब्रगाह बरबाद है। कब्र के पत्थर उखड़ रहे हैं, छतरी के खंभों की परतें भी। नगर के संग्रहालय में तैस्सितोरी के संग्रह वाले भाग में उनका कोई स्मृति-चिह्न तक नहीं है। न उनका नाम। बाहर एक बेडौल मूर्ति प्रतिष्ठापित है। उसके स्तंभ पर तैस्सितोरी की याद संजोने वाले कृपालु लोगों के नामों ने मूर्ति से ज्यादा जगह घेर रखी है।

सराहनीय काम सरकारी अभिलेखागार में देखने को मिला। धूसर ईंटों की विशाल इमारत की हर खिड़की और दरवाजे पर सलाखें जड़ी हैं, एकबारगी लगता है कोई जेल हो। शुभू पटवा- जो हमारे साथ थे- बोले, आगार दस्तावेजों की कैद ही तो है! ''दस्तावेजों की तलाश यहां किसी जेल में बंद कैदी से मुलाकात करने से मुश्किल साबित होगी!'' लेकिन भला हो अधिकारियों का, जिन्होंने बाहर से मिली सामग्री में अपने दस्तावेज शामिल कर एक तैस्सितोरी कक्ष की स्थापना कर दी है। इटली से तैस्सितोरी के परिजनों से लाई गई तस्वीरें, शोध की प्रतियां, पत्राचार और छिटपुट कतरनें कक्ष में प्रदर्शित हैं। यह काम और आगे बढ़ाया जा सकता है। संस्थान के निदेशक महेंद्र खड़गावत ने बताया कि एक वेबसाइट के निर्माण पर काम चल रहा है। इटली में यह काम हो चुका है। हालांकि दिल्ली में इटली के दूतावास को अब तक यह नहीं सूझा है कि (जर्मन दूतावास के) मैक्सम्युलर भवन की तरह वह अपने सांस्कृतिक केंद्र का नाम तैस्सितोरी के नाम पर कर दे। मैक्सम्युलर तो कभी भारत आए भी नहीं थे! तैस्सितोरी ने यहां काम किया, यहीं जान भी गंवाई।

इतिहासप्रेमी डॉ. गिरिजाशंकर शर्मा ने उक्त अभिलेखागार की धूल-भरी फाइलों से तैस्सितोरी के बारे में काफी सामग्री खोजी है। वे कभी इसी दफ्तर में उपनिदेशक थे। उन्होंने बताया कि तैस्सितोरी ने बीकानेर में चार वर्ष में पुरातात्त्विक महत्त्व की करीब सौ जगहों की खुदाई करवाई। अध्येताओं के लिए वहां से ९८२ वस्तुएं जमा कीं। ९४१ शिलालेखों और इबारतों की छापों का संग्रह किया। हस्तलिखित ग्रंथों का संग्रह अलग, जो एशियाटिक सोसायटी की तरफ से उनका मूल जिम्मा था। जोधपुर क्षेत्र के डिंगल गद्य और बीकानेर के गद्य-पद्य की उन्होंने विस्तृत विवरणिका तैयार की। चुनिंदा- और अब विख्यात- ग्रंथों की टीका के साथ यह सारी सामग्री सोसायटी की शोध-पत्रिका में छपी। कुछ उनके जीते जी, कुछ मृत्यु के बाद।

तैस्सितोरी जब इटली से छुट्टी बिता कर बीमार अवस्था में बीकानेर लौटे, तब एक अंग्रेज अधिकारी डब्लूएच जेम्स ने देखभाल के लिए उन्हें अपने घर रखा था। वे बचे नहीं और बीकानेर के रेवेन्यू मेंबर (राजस्व मंत्री) जीडी रडकिन ने इतालवी वाणिज्य दूतावास को मृत्यु की सूचना दी: ''डॉ. एलपी तैस्सितोरी का २२ नवंबर, १९१९ को निधन हो गया। पहले वे गल-शोथ से पीड़ित रहे, फिर फेफड़ा-झिल्ली रोग (प्लुरिसी) से।... उन्हें यहां एक छोटी कब्रगाह में दफना दिया गया है।'' बाद में यह समझा गया कि मृत्यु संभवत: निमोनिया से हुई थी।

डॉ. शर्मा से चौंकाने वाली जानकारी तैस्सितोरी के निजी सामान की नीलामी की मिली। बीकानेर रियासत की तरफ से छह बक्से वाणिज्य दूतावास के मार्फत तैस्सितोरी के पिता को उदिने भेज दिए गए थे। कुछ में हस्तलिखित ग्रंथों का संग्रह था, बाकी में कपड़े। लोगों से मांग कर लिए ग्रंथ उन्हें वापस भेज दिए। इन लोगों

के नाम दर्ज हैं: आचार्य विजयधर्म सूरि (बंबई), गणेशीलाल (कालू), जोरमल (फलोदी) और किशोरदांन (जोधपुर)। छपी पुस्तकें एशियाटिक सोसायटी को सौंप दी गईं। जाहिर है, इन चीजों को उस वक्त शायद कोई खरीदता नहीं। लेकिन बाकी तमाम सामान बोली लगाकर बेचा गया। उस सूची की बानगी देखिए: सेठ बहादुरमल रामपुरिया: चार आसन, दो तलवार, ढाल, लैंप। पं. विश्वेसरनाथ: बरतन, वाशिंग मशीन, पॉकेट चाकू। सेठ बृजरतन कोठारी: तेरह चम्मच; लालताप्रसाद अग्निहोत्री: फाउंटेन-पेन, रेजर और कंबल। सेठ बृजरतन डागा...। सूची बहुत लंबी है। नीलामी में सामान उठाने वालों में राजकुमार भैरूंसिंह (बाद में रियासत के प्रधानमंत्री) और डब्लूएच जेम्स का नाम भी दर्ज है जिन्होंने तैस्सितोरी की परिचर्या की थी!

मुझे ज्यादा हैरत इस बात पर हुई कि जिन तैस्सितोरी ने बीकानेर के पृथ्वीराज राठौड़ 'पीथल़' कृत 'वेलि क्रिसन रुकमणी री' की खोज और ऐतिहासिक समालोचना कर राजपूत समाज को साहित्य की ऊंचाई दी (तब तक राजपूत योद्धा माने जाते थे, कवि कदापि नहीं!), उस कवि के असल खानदान ने मृत्यु के बाद तैस्सितोरी के साथ यह सलूक किया। कोई रियासत ऐसी नीलामी के धन की मोहताज नहीं हो सकती। याद करें, जोधपुर से रुख्सत होने पर बीकानेर के महाराजा गंगासिंह ने उन्हें आदर से अपने यहां बुलवाया था। तैस्सितोरी ने वहां लोक-साहित्य के संधान के साथ पुरावशेषों और अन्य जानकारी के आधार पर बीकानेर के इतिहास की टूटी कड़ियों को भी जोड़ा। उन्होंने ही स्थापित किया कि राव बीका जोधपुर नरेश राव जोधा के छोटे नहीं, बड़े बेटे थे।

उधर दूर इटली में परिजनों को सामान की नहीं, शव की चिंता थी। २८ दिसंबर, १९१९ को उदिने से तैस्सितोरी की बहन एलेना ने भारतीय भाषा सर्वेक्षण विभाग को एक पत्र लिखा: ''परिवार को डॉ. तैस्सितोरी के निधन की सूचना इटली में छब्बीस दिन बाद मिली है, वह भी पूरी नहीं है। सारा परिवार परेशान है और चाहता है कि तैस्सितोरी के शव को इटली भेज दिया जाए। डॉ. तैस्सितोरी के पिता और बहन बहुत निर्धन हैं, इसलिए उन्हें यह मदद की जाए।''

राज्य अभिलेखागार के रेकार्ड के मुताबिक इटली के कार्यवाहक दूत (कौंसल) लुइजी सेग्री ने इस बारे में जीडी रडकिन को बीकानेर पत्र लिखा कि बंबई नगरपालिका के नियमों के मुताबिक दफ्न शव अठारह महीनों के बाद ही निकाला जा सकता है, आप अगर तैस्सितोरी का शव जल्दी निकलवा सकें तो उसे विशेष जहाज से इटली भेजने का प्रबंध किया जा सकता है। बीकानेर रियासत में इस संबंध में नियम न होने की वजह से कोई कार्रवाई नहीं हुई। डॉ. शर्मा ने दस्तावेजों का हवाला देते हुए हमें बताया कि तैस्सितोरी के अंतिम संस्कार पर तिहत्तर रुपए, तीन आने, नौ पैसे खर्च हुए थे। क्रॉस की कीमत सात रुपए, पंद्रह आने, तीन पैसे दर्ज है।

शार्दूल राजस्थानी शोध संस्थान ने १९५६ में जब तैस्सितोरी की सुध ली, धुनी सेठ हजारीमल बांठिया ने उनसे मिलकर इतालवी विद्वान की कब्र की तलाश शुरू करवाई। संस्थान की पत्रिका 'राजस्थान भारती' के संपादक बदरीप्रसाद सकारिया ने कब्रिस्तानों की खाक खुद छानी। गिरजे के रेकार्ड में कहीं तैस्सितोरी को दफनाने का जिक्र नहीं मिला। दुबारा प्रयास होने पर गिरजे के तत्कालीन अधिकारी आइवर टिक्का ने ब्योरा ढूंढ़ निकाला। वह चार नंबर कब्र थी, गिरजे के ठीक पीछे। बांठिया ने कब्र को पक्का करवाया। उसी वर्ष तैस्सितोरी की पुण्यतिथि पर डॉ. सुनीति कुमार चटर्जी और इतालवी दूत की मौजूदगी में 'समाधि' का औपचारिक अनावरण हुआ।

दिल्ली लौटकर जब इटली स्थित 'सोचिता इंदोलोजिका' की तैस्सितोरी वेबसाइट देखी तो कुछ नई जानकारी हासिल हुई। मृत्यु के बाद तैस्सितोरी के घर का ताला जीडी रडकिन और दूसरे अंग्रेज साथी एचजी रालिन्स ने खुलवाया था। जिन चीजों को उन्होंने 'कीमती' समझा, पिता को भिजवा दीं। बाकी सब सामान करीब दो हजार रुपए में नीलाम हुआ। उदिने के सीमा-शुल्क दफ्तर के बंबई से आए सामान की सुपुर्दगी के वक्त मालूम हुआ कि कुछ बक्सों की दूतावास वाली सील टूटी हुई है। दरअसल, किताबों और पांडुलिपियों आदि के बक्से ही सीलबंद पहुंचे। बाकी सब कमोबेश रास्ते में जाने कहां खाली कर दिए गए थे।

डेढ़ साल बाद तैस्सितोरी के पिता की मृत्यु हो गई। तैस्सितोरी की बहनों ने किताबें और पांडुलिपियां शहर के सार्वजनिक पुस्तकालय को दे दीं। बाकी चीजें और पत्र उनके घर रहे। अब वह सामग्री तैस्सितोरी के भतीजे गुइदो पिआनो के पास है। उन्होंने उसे सात हिस्सों में वर्गीकृत कर दिया है। उनमें एक है, ''अप्रकाशित सामग्री''। यह सामग्री क्या है? कितनी है? कोई मालूम करे। ऐसी सामग्री यहां भी होगी। उसकी खोज हो। वे बिखरी चीजें सबके सामने आएं तभी बीकानेर में तैस्सितोरी की लंबी नींद को चैन होगा।

बहरहाल, बीकानेर के अभिलेखागार में तैस्सितोरी के जो हिंदी में लिखे पत्र मिले, उन्हें देखकर मैं अब तक विभोर हूं। ऐसी भाषा और सुलेख विदेशी ही नहीं, देश के हिंदी-भाषियों में दुर्लभ होगा। आपको इस बात का भरोसा शायद उन पत्रों को देख-पढ़कर ही हो!